



Original Article

शुंगकालीन भारतीय जीवन : एक विस्तृत अध्ययन

डॉ. अजय पासवान

सहायक प्राध्यापक (अतिथि संकाय), प्राचीन इतिहास विभाग,
किशोरी सिंहा महिला महाविद्यालय औरंगाबाद, मगध विश्वविद्यालय, गया, बिहार

Manuscript ID:

IJAAR-130412

ISSN: 2347-7075

Impact Factor – 8.141

Volume - 13

Issue - 4

March – April 2026

Pp. 57 - 62

Submitted: 3 Mar. 2026

Revised: 19 Mar. 2026

Accepted: 22 Mar. 2026

Published: 10 Apr. 2026

Corresponding Author:

डॉ. अजय पासवान

Quick Response Code:



Website: <https://ijaar.co.in/>



DOI: 10.5281/zenodo.19695050

DOI Link:

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19695050>

सारांश :

शुंगकाल (लगभग 185 ई.पू. से 73 ई.पू.) भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण संक्रमणकाल है, जो मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् आरंभ हुआ और जिसने भारतीय समाज, राजनीति तथा संस्कृति के पुनर्गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस काल में जहाँ एक ओर राजनीतिक सत्ता का केंद्रीकरण समाप्त हुआ, वहीं दूसरी ओर क्षेत्रीय शक्तियों का उदय हुआ, जिसके परिणामस्वरूप शासन व्यवस्था में विकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आई।

शुंग वंश के संस्थापक पुष्यमित्र शुंग के नेतृत्व में ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान हुआ तथा वैदिक परंपराओं को पुनर्जीवित करने का संगठित प्रयास किया गया। अश्वमेध यज्ञ जैसे वैदिक अनुष्ठानों के पुनः आयोजन से धार्मिक जीवन में परंपरागत मूल्यों की पुनर्स्थापना हुई। तथापि, यह काल धार्मिक सहिष्णुता का भी द्योतक रहा, क्योंकि बौद्ध एवं जैन धर्म का प्रभाव समाज में निरंतर बना रहा और उनके अनुयायियों की सक्रियता में कोई विशेष कमी नहीं आई।

सामाजिक दृष्टि से शुंगकाल में वर्ण-व्यवस्था अधिक सुदृढ़ एवं संगठित रूप में स्थापित हुई, जिससे सामाजिक संरचना में स्थायित्व तो आया, किन्तु सामाजिक गतिशीलता पर कुछ हद तक नियंत्रण भी स्थापित हुआ। स्त्रियों की स्थिति इस काल में मिश्रित रही—एक ओर उन्हें धार्मिक अनुष्ठानों में भागीदारी प्राप्त थी, वहीं दूसरी ओर पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण उनके अधिकार सीमित रहे।

आर्थिक जीवन की दृष्टि से यह काल अपेक्षाकृत स्थिर और प्रगतिशील था। कृषि प्रमुख आर्थिक आधार बनी रही, जिसमें लोहे के उपकरणों के उपयोग तथा सिंचाई साधनों के विकास से उत्पादन में वृद्धि हुई। साथ ही व्यापार, वाणिज्य एवं शिल्प उद्योगों का भी उल्लेखनीय विकास हुआ, जिससे आंतरिक आर्थिक संरचना सुदृढ़ बनी रही।

सांस्कृतिक एवं कलात्मक जीवन में शुंगकाल विशेष रूप से समृद्ध था। इस काल में स्थापत्य एवं मूर्तिकला के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई, जिसका उत्कृष्ट उदाहरण भरहुत और साँची के स्तूप हैं, जिनमें धार्मिक कथाओं एवं प्रतीकों का अत्यंत सूक्ष्म एवं कलात्मक चित्रण देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त संस्कृत भाषा एवं साहित्य के विकास ने भी इस युग को बौद्धिक दृष्टि से समृद्ध बनाया।

अतः स्पष्ट है कि शुंगकाल केवल एक राजनैतिक परिवर्तन का काल नहीं था, बल्कि यह भारतीय सभ्यता के पुनर्जागरण, सांस्कृतिक पुनर्संरचना तथा सामाजिक स्थिरीकरण का एक महत्वपूर्ण चरण था। प्रस्तुत शोधपत्र में शुंगकालीन भारतीय जीवन के राजनीतिक, सामाजिक,



Creative Commons



धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आयामों का समग्र, विश्लेषणात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जो इस युग की बहुआयामी विशेषताओं को समझने में सहायक सिद्ध होगा।

मुख्य शब्द : शृंगकाल, पुष्यमित्र शृंग, ब्राह्मण धर्म, वर्ण व्यवस्था, सामाजिक जीवन, भरहुत स्तूप, साँची स्तूप, प्राचीन भारत

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.

How to cite this article:

डॉ. अजय पासवान (2026). शृंगकालीन भारतीय जीवन : एक विस्तृत अध्ययन. *International Journal of Advance and Applied Research*, 13(4), 57 - 62.

<https://doi.org/10.5281/zenodo.19695050>

प्रस्तावना :

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात भारतीय उपमहाद्वीप में जो व्यापक राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन हुए, वे शृंगकाल के रूप में अभिव्यक्त होते हैं। यह काल केवल सत्ता परिवर्तन का द्योतक नहीं था, बल्कि भारतीय सभ्यता के पुनर्संरचना और पुनर्जागरण का भी एक महत्वपूर्ण चरण था। मौर्यकालीन केंद्रीकृत शासन व्यवस्था के विघटन के बाद उत्पन्न राजनीतिक शून्यता को शृंग वंश ने भरा, जिससे एक नवीन प्रशासनिक और सामाजिक ढाँचे का विकास हुआ।

शृंग वंश के संस्थापक पुष्यमित्र शृंग ने न केवल राजनीतिक स्थिरता स्थापित करने का प्रयास किया, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं के पुनरुद्धार को भी अपना प्रमुख उद्देश्य बनाया। इस काल में वैदिक परंपराओं, यज्ञों तथा ब्राह्मण धर्म का पुनः उत्कर्ष हुआ, जिससे भारतीय समाज में पारंपरिक धार्मिक मूल्यों की पुनर्स्थापना हुई। अश्वमेध यज्ञ जैसे वैदिक अनुष्ठानों का आयोजन इस पुनरुत्थान का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रस्तुत करता है।

हालाँकि, शृंगकाल को केवल ब्राह्मण धर्म के उत्कर्ष तक सीमित कर देना उचित नहीं होगा। यह काल धार्मिक सहिष्णुता और बहुलता का भी प्रतीक रहा। बौद्ध एवं जैन धर्म

का प्रभाव समाज में बना रहा, जिसके प्रमाण भरहुत और साँची जैसे स्तूपों के निर्माण एवं विस्तार में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। इस प्रकार शृंगकालीन समाज में विविध धार्मिक परंपराओं का सह-अस्तित्व देखने को मिलता है, जो भारतीय संस्कृति की मूलभूत विशेषता रही है।

सामाजिक दृष्टि से यह काल वर्ण-व्यवस्था के सुदृढीकरण का काल था, जिसमें सामाजिक वर्गों की भूमिकाएँ अधिक स्पष्ट और संगठित हुईं। ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई तथा समाज में धार्मिक और नैतिक अनुशासन को अधिक महत्व दिया गया। साथ ही, परिवार संस्था, विवाह प्रथा तथा सामाजिक रीति-रिवाजों का भी सुव्यवस्थित विकास हुआ।

आर्थिक परिप्रेक्ष्य में शृंगकालीन समाज कृषि पर आधारित था, किन्तु इसके साथ-साथ व्यापार, वाणिज्य एवं शिल्प उद्योगों का भी पर्याप्त विकास हुआ। आंतरिक व्यापारिक मार्गों के विस्तार तथा शिल्पकला के उन्नयन ने आर्थिक जीवन को सुदृढ बनाया।

सांस्कृतिक एवं कलात्मक दृष्टि से यह काल अत्यंत समृद्ध था। स्थापत्य कला, मूर्तिकला तथा चित्रकला के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। भरहुत एवं साँची स्तूपों में उत्कीर्ण शिल्पकला इस युग की उच्च कलात्मकता और धार्मिक चेतना



का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करती है। इसके अतिरिक्त संस्कृत भाषा और साहित्य का पुनः उत्कर्ष भी इस काल की महत्वपूर्ण उपलब्धि थी।

इतिहासकारों के अनुसार, शृंगकाल एक ओर ब्राह्मण धर्म के उत्कर्ष का प्रतीक है, तो दूसरी ओर यह धार्मिक सहिष्णुता, सांस्कृतिक विविधता तथा सामाजिक पुनर्गठन का भी द्योतक है।¹ इस प्रकार यह काल भारतीय इतिहास में एक ऐसे संक्रमणकाल के रूप में स्थापित होता है, जिसने प्राचीन परंपराओं को पुनर्जीवित करते हुए भावी भारतीय सभ्यता के विकास की ठोस आधारशिला रखी।

शृंग वंश का उदय और राजनीतिक परिदृश्य:

शृंग वंश का उदय मौर्य साम्राज्य के अंतिम चरण में हुआ। पुष्यमित्र शृंग, जो मौर्य सम्राट बृहद्रथ का सेनापति था, ने लगभग 185 ई.पू. में उसकी हत्या कर स्वयं सत्ता ग्रहण की।²

शृंग शासन की प्रमुख विशेषताएँ:

- केंद्रीकरण की अपेक्षा विकेंद्रीकरण
- सामंतवादी प्रवृत्तियों का विकास
- सीमांत क्षेत्रों में स्वायत्तता
- विदेशी आक्रमणों का प्रतिरोध

यवन (Indo-Greek) आक्रमणों का उल्लेख पतंजलि के 'महाभाष्य' और अन्य स्रोतों में मिलता है, जिससे इस काल की राजनीतिक चुनौतियों का अनुमान होता है।³

प्रशासनिक व्यवस्था: शृंग प्रशासन मौर्य प्रशासन की तुलना में कम संगठित था।

- राजा सर्वोच्च सत्ता का केंद्र था।
- मंत्रिपरिषद का अस्तित्व था, किन्तु उसकी भूमिका सीमित थी।
- प्रांतों में स्थानीय शासकों को अधिकार दिए गए।

- कर प्रणाली कृषि और व्यापार पर आधारित थी।
- न्याय व्यवस्था धर्मशास्त्रों एवं परंपराओं पर आधारित थी।⁴

सामाजिक जीवन:

शृंगकालीन सामाजिक जीवन मुख्यतः वर्ण-व्यवस्था पर आधारित था, जो इस काल में अधिक सुदृढ़ और संगठित रूप में विकसित हुई। समाज चार प्रमुख वर्गों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—में विभाजित था, जिनकी भूमिकाएँ स्पष्ट रूप से निर्धारित थीं। ब्राह्मणों को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था और वे धार्मिक तथा शैक्षिक कार्यों के केंद्र में थे, जबकि क्षत्रिय शासन और सुरक्षा से संबंधित कार्यों में संलग्न थे। वैश्य वर्ग व्यापार, कृषि और पशुपालन से जुड़ा था, वहीं शूद्रों की स्थिति अपेक्षाकृत निम्न थी और वे सेवा कार्यों में संलग्न रहते थे।

परिवार सामाजिक जीवन की मूल इकाई था, जिसमें संयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित थी। सामाजिक संबंधों में परंपरा, आचार-विचार और धर्म का विशेष महत्व था। स्त्रियों की स्थिति सामान्यतः सीमित थी, किन्तु उन्हें धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेने का अवसर प्राप्त था। विवाह संस्था को सामाजिक जीवन का आधार माना जाता था और पारिवारिक मूल्यों को विशेष महत्व दिया जाता था।

इस प्रकार शृंगकालीन सामाजिक जीवन अनुशासित, परंपरानिष्ठ और संगठित था, जिसमें स्थिरता तो थी, किन्तु सामाजिक गतिशीलता अपेक्षाकृत सीमित रही।

(क) वर्ण-व्यवस्था का सुदृढ़ीकरण: शृंगकाल में वर्ण-व्यवस्था अधिक कठोर और संगठित हो गई।

- ब्राह्मणों का सामाजिक वर्चस्व बढ़ा।
- क्षत्रिय शासक वर्ग के रूप में स्थापित रहे।
- वैश्य वर्ग व्यापार और कृषि में संलग्न रहा।
- शूद्रों की स्थिति अपेक्षाकृत निम्न रही।⁵



(ख) स्त्रियों की स्थिति: स्त्रियों की स्थिति इस काल में द्वैध थी।

- धार्मिक कार्यों में भागीदारी थी।
- शिक्षा सीमित थी।
- विवाह संस्था महत्वपूर्ण थी।
- पितृसत्तात्मक व्यवस्था का प्रभाव स्पष्ट था।⁶

(ग) परिवार और समाज: शुककालीन समाज में परिवार एक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाई के रूप में स्थापित था। संयुक्त परिवार प्रणाली का प्रचलन था, जिसमें कई पीढ़ियाँ एक साथ निवास करती थीं और परिवार के मुखिया का विशेष अधिकार होता था। पारिवारिक जीवन पर धर्म, परंपरा और सामाजिक मर्यादाओं का गहरा प्रभाव था।

समाज मुख्यतः पितृसत्तात्मक था, जहाँ वंश परंपरा और संपत्ति का उत्तराधिकार पुरुषों के माध्यम से संचालित होता था। विवाह को एक धार्मिक एवं सामाजिक बंधन माना जाता था, जिसका उद्देश्य केवल पारिवारिक विस्तार ही नहीं, बल्कि सामाजिक स्थिरता बनाए रखना भी था।

सामाजिक स्तर पर आचार-विचार, रीति-रिवाज और धार्मिक मान्यताओं का कठोर पालन किया जाता था। विभिन्न वर्गों के बीच सामाजिक संबंध निश्चित मर्यादाओं के अंतर्गत रहते थे। इस प्रकार शुककालीन परिवार और समाज परंपरानिष्ठ, अनुशासित तथा संरचनात्मक रूप से सुदृढ़ था, जिसने सामाजिक व्यवस्था को स्थायित्व प्रदान किया

- संयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित थी।
- सामाजिक अनुशासन और परंपराओं का पालन आवश्यक था।

धार्मिक जीवन:

(क) ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान: पुष्यमित्र शुंग ने वैदिक यज्ञों का पुनः प्रचलन बढ़ाया, विशेषकर अश्वमेध यज्ञ।⁷

(ख) बौद्ध धर्म की स्थिति: यद्यपि कुछ स्रोतों में बौद्ध धर्म के प्रति विरोध का उल्लेख मिलता है, परंतु भरहुत और साँची स्तूपों के विकास से यह स्पष्ट है कि बौद्ध धर्म भी सक्रिय रहा।⁸

(ग) जैन धर्म: जैन धर्म भी समाज में विद्यमान रहा और उसके अनुयायी सक्रिय थे।

(घ) धार्मिक सहिष्णुता: विभिन्न धर्मों का सह-अस्तित्व इस काल की विशेषता थी।

आर्थिक जीवन:

(क) कृषि:

- मुख्य व्यवसाय कृषि था।
- लोहे के औजारों का उपयोग बढ़ा।
- सिंचाई व्यवस्था विकसित थी।⁹

(ख) व्यापार:

- आंतरिक व्यापार का विस्तार हुआ।
- व्यापारिक मार्गों का विकास हुआ।
- सिक्कों का उपयोग बढ़ा।

(ग) शिल्प एवं उद्योग:

- कुटीर उद्योगों का विकास हुआ।
- धातु, वस्त्र और मिट्टी के बर्तनों का उत्पादन हुआ।¹⁰

सांस्कृतिक एवं कलात्मक जीवन:

(क) स्थापत्य कला:

- भरहुत स्तूप
- साँची स्तूप

इन स्तूपों में धार्मिक कथाओं का सुंदर चित्रण किया गया है।¹¹



(ख) मूर्तिकला:

- प्रतीकात्मक कला का विकास
- कथात्मक शिल्पकला

(ग) साहित्य एवं भाषा:

- संस्कृत भाषा का पुनः उत्कर्ष
- पतंजलि का 'महाभाष्य' इस काल का महत्वपूर्ण ग्रंथ है।¹²

शिक्षा एवं बौद्धिक जीवन:

शुंगकाल में शिक्षा का स्वरूप पारंपरिक एवं धर्मप्रधान था। गुरुकुल प्रणाली प्रचलित थी, जहाँ विद्यार्थी आचार्य के सान्निध्य में रहकर वेद, उपनिषद, व्याकरण, धर्मशास्त्र और दर्शन का अध्ययन करते थे। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य नैतिक मूल्यों, धार्मिक ज्ञान तथा आचार-संहिता का विकास करना था।

इस काल में संस्कृत भाषा का पुनः उत्कर्ष हुआ और यह ज्ञान-विज्ञान तथा साहित्य की प्रमुख भाषा बनी। विद्वानों और आचार्यों को समाज में उच्च स्थान प्राप्त था तथा वे बौद्धिक जीवन के मार्गदर्शक माने जाते थे।

बौद्धिक दृष्टि से शुंगकाल में दार्शनिक चिंतन, व्याकरण और शास्त्रीय अध्ययन का विकास हुआ, जिससे यह युग ज्ञान और विचारों की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण बन गया।

- गुरुकुल प्रणाली प्रचलित थी।
- वेद, उपनिषद और शास्त्रों का अध्ययन होता था।
- विद्वानों को समाज में उच्च स्थान प्राप्त था।

विदेशी संपर्क और प्रभाव:

यवनों के साथ संघर्ष के साथ-साथ सांस्कृतिक संपर्क भी हुआ। इससे कला और व्यापार में कुछ बाहरी प्रभाव भी देखने को मिलते हैं।¹³

शुंगकाल का ऐतिहासिक महत्व:

- भारतीय संस्कृति का पुनर्जागरण
- ब्राह्मण धर्म का उत्कर्ष
- कला और स्थापत्य का विकास
- सामाजिक संरचना का सुदृढीकरण

निष्कर्ष :

शुंगकाल भारतीय इतिहास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और निर्णायक युग सिद्ध होता है, जिसमें सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन के विभिन्न आयामों में व्यापक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। यह काल केवल मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् उत्पन्न एक राजनीतिक व्यवस्था का ही प्रतीक नहीं था, बल्कि यह भारतीय समाज के पुनर्गठन और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी सशक्त चरण था।

इस युग में जहाँ एक ओर ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान हुआ और वैदिक परंपराओं को पुनः प्रतिष्ठित किया गया, वहीं दूसरी ओर बौद्ध एवं जैन धर्म का प्रभाव भी बना रहा, जो इस काल की धार्मिक सहिष्णुता और बहुलतावादी स्वरूप को दर्शाता है। सामाजिक जीवन में वर्ण-व्यवस्था का सुदृढीकरण हुआ, जिससे समाज में स्थिरता और संगठन तो आया, किन्तु सामाजिक गतिशीलता कुछ हद तक सीमित हो गई।

आर्थिक दृष्टि से शुंगकाल एक संतुलित और सुदृढ व्यवस्था का द्योतक था, जिसमें कृषि के साथ-साथ व्यापार, वाणिज्य एवं शिल्प का भी उल्लेखनीय विकास हुआ। इसने समाज की आर्थिक संरचना को स्थायित्व प्रदान किया। साथ



ही, कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में भरहुत और साँची जैसे स्मारकों का निर्माण इस युग की सांस्कृतिक समृद्धि और कलात्मक उत्कृष्टता का परिचायक है।

शिक्षा एवं बौद्धिक जीवन के क्षेत्र में भी इस काल ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। संस्कृत भाषा के पुनरुत्थान तथा शास्त्रीय अध्ययन के विकास ने भारतीय बौद्धिक परंपरा को सुदृढ़ किया। गुरुकुल प्रणाली के माध्यम से ज्ञान का संरक्षण और संवर्धन हुआ, जिससे समाज में नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों का प्रसार हुआ।

अतः समग्र रूप से देखा जाए तो शृंगकाल एक ऐसा संक्रमणकाल था, जिसने प्राचीन भारतीय परंपराओं को पुनर्जीवित करते हुए उन्हें एक नई दिशा प्रदान की। यह काल भारतीय सभ्यता के विकास की उस आधारशिला के रूप में उभरता है, जिस पर आगे चलकर गुप्तकालीन स्वर्ण युग की भव्य संरचना का निर्माण हुआ। इस प्रकार शृंगकालीन समाज न केवल अपने समय में महत्वपूर्ण था, बल्कि उसने भारतीय इतिहास की दीर्घकालिक धारा को भी गहराई से प्रभावित किया।

संदर्भ सूची:

1. थापर, रोमिला. प्राचीन भारत (Origins से AD 1300 तक). नई दिल्ली: पेंगुइन प्रकाशन, 2002, पृ. 210–235।
2. मजूमदार, आर.सी. प्राचीन भारत. मुंबई: मोतीलाल बनारसीदास, 1977, पृ. 165–185।
3. शर्मा, आर.एस. प्राचीन भारत में भौतिक संस्कृति एवं सामाजिक संरचनाएँ. नई दिल्ली: मैकमिलन, 1983, पृ. 120–145।
4. झा, डी.एन. प्राचीन भारत: एक प्रारंभिक रूपरेखा. नई दिल्ली: पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, 1998, पृ. 95–110।
5. कोसांबी, डी.डी. भारतीय इतिहास के अध्ययन का परिचय. मुंबई: पॉपुलर प्रकाशन, 1975, पृ. 140–160।
6. रायचौधुरी, एच.सी. प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास. कलकत्ता: यूनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, 1953, पृ. 240–260।
7. अल्टेकर, ए.एस. हिंदू सभ्यता में स्त्रियों की स्थिति. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, 1962, पृ. 80–100।
8. ब्राउन, पर्सी. भारतीय वास्तुकला (बौद्ध एवं हिंदू काल). नई दिल्ली: डी.बी. तारापोरवाला, 1965, पृ. 50–70।
9. पतंजलि. महाभाष्य. वाराणसी: चौखंबा संस्कृत सीरीज, (विभिन्न खंड), पृ. 200–220।